International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 05, No. 04(II), October - December, 2023, pp. 147-150

भारत में प्रवासी श्रमिकों के श्रम मानकों में अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संगठन की भूमिका

तनुश्री बड़गोतिया*
डॉ. दिनेश कुमार गहलोत**

सार

18वीं और 19वीं शताब्दी में यूरोप में औद्योगिक क्रांति के आगमन के साथ, विश्व अर्थव्यवस्था में कारखाना श्रमिकों का एक नया वर्ग उभरा। औद्योगिक क्रांति की उत्पादन प्रक्रियाओं में पूंजी और श्रम उत्पादन के मुख्य कारक थे। परिणामस्वरूप, निजी अर्थव्यवस्था में उत्पादकों या मालिकों और श्रमिकों का उदय हुआ। श्रमिकों के लिए श्रम मानकों को बनाए रखना और उन्हें श्रम मानकों के अनुसार कल्याण सुविधाएं प्रदान करना आवश्यक था। अतः वर्साय की संधि के तहत वर्ष 1919 में अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना की गई थी। वर्ष 2020 में भारत में लगभग कर्मियों अथवा कामगारों की संख्या 501 मिलियन थी, जो चीन के बाद किसी देश में कर्मियों की सबसे बड़ी संख्या है। देश के कुल श्रम बल में से 41.19 प्रतिशत कृषि उद्योग में, 26.18 प्रतिशत उद्योग क्षेत्र में और 32.33 प्रतिशत सेवा क्षेत्र में कार्यरत हैं। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य भारतीय अर्थव्यवस्था में श्रमिकों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संगठन द्वारा अपनाई गई नीति को जानना और प्रवासी श्रमिकों और अन्य लोगों के जीवन और कामकाजी परिस्थितियों में सुधार के लिए श्रम मानकों पर चर्चा करना है। यह भारत में प्रवासी श्रमिकों के लिए श्रम अधिकारों और मानकों के बारे में भी अध्ययन करता है और भारत में प्रवासी श्रमिकों की सुरक्षा के लिए उपाय सुझाता है। शोधपत्र प्रकृति में वर्णनात्मक है और ज्यादातर भारत में सरकारी और गैर–सरकारी एजेंसियों की विभिन्न रिपोर्टों में प्रकाशित प्राथमिक और द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है।

शब्दकोशः *औद्योगिक क्रांति, सरकारी और गैर–सरकारी, अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संगठन, प्रवासी श्रमिक, श्रम मानक, संयुक्त राष्ट्र महासभा, मानवाधिकार।*

प्रस्तावना

दूसरे युद्ध के बाद संयुक्त राष्ट्र महासभा ने मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा को अपनाया था। दुनिया के कई विकसित और विकासशील देशों की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक नीतियों को सूचित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण मौलिक अंतरराष्ट्रीय उपकरण मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा, 10 दिसंबर, 1948 है। हालाँकि, मानव अधिकारों को कई देशों के संविधानों में शामिल किया गया है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के सिद्धांतों और कार्यस्थल पर अधिकारों के अनुसार, विश्व अर्थव्यवस्था में श्रमिक वर्ग के लिए मुख्य अधिकार महत्वपूर्ण हैं। भारत एक विकासशील देश है. भारत ने 1991 में नई आर्थिक नीति अपनाई, जिसे उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के नाम से जाना जाता है।

* शोधार्थी, लोक प्रशासन विभाग, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान।
** सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान।

भारत के श्रम बल को दो क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है– संगठित क्षेत्र और असंगठित क्षेत्र। भारत की प्रमुख सामाजिक–आर्थिक समस्या यह है कि इसके अधिकांश नागरिक बेहतर जीवनयापन के लिये संघर्षरत हैं। श्रम कानूनों को सरल बनाने के लिये और कार्य–दशाओं में सुधार के लिये सरकार द्वारा कई विधायी और प्रशासनिक पहलें की गई हैं। इस संबंध में वर्तमान में 4 श्रम संहिताओं का एक समेकित समूह भी लाया गया है जिन्हें अभी लागू किया जाना शेष है।

- वेतन संहिता, 2019
- औद्योगिक संबंध संहिता, 2020
- सामाजिक सुरक्षा संहिता, 2020
- व्यावसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य और कार्य स्थिति संहिता, 2020

इनके कार्यान्वयन में देरी हो रही है क्योंकि राज्यों द्वारा इन संहिताओं के तहत अपने नियमों को अंतिम रूप दिया जाना अभी शेष है।

नई आर्थिक नीति ने देश के चेहरे को बदल दिया है। वैश्वीकरण अपने साथ उत्पादन प्रक्रियाओं और रोजगार संबंधों का पुनर्गठन लाया है। वैश्वीकरण के युग में, भारत जैसे विकासशील देशों में प्रवासी श्रमिकों के संबंध में श्रम मानकों और श्रम अधिकारों के प्रासंगिक पहलुओं, सभ्य कार्य के आयामों पर चर्चा किया जाना प्रसंगिक है।

सामाजिक सुरक्षा श्रमिकों का मौलिक अधिकार है। जिसकी गारंटी कानून द्वारा उन सभी मनुष्यों को दी जाती है, जो अपनी मेहनत से जीवन यापन करते हैं और जो अपने नियंत्रण के लिए अस्थायी या स्थायी रूप से काम करने में खुद को असमर्थ पाते हैं। सामाजिक सुरक्षा के संदर्भ में, पहली शुरुआत फ्रांसीसी क्रांति के समय की गई थी। मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा के अनुच्छेद 22 के अनुसार, समाज के प्रत्येक सदस्य को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार है। कार्यस्थल पर मौलिक सिद्धांतों और अधिकारों पर अर्न्तराष्ट्रीय श्रमिक संगठन घोषणा इस दिशा में एक बड़ा कदम है। संयुक्त राष्ट्र की आर्थिक सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय संधि श्रमिकों को आर्थिक सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार प्रदान करने वाला एक और अंतरराष्ट्रीय साधन है।

भारत का संविधान भाग प्प में नागरिकता के अधिकार प्रदान करता है। नागरिकता अधिकारों को मौलिक माना गया है, क्योंकि वे किसी व्यक्ति की पूर्ण बौद्धिक नैतिक और आध्यात्मिक स्थिति की प्राप्ति के लिए सबसे आवश्यक हैं। कार्यस्थल पर न्यूनतम अधिकारों की गारंटी लोगों को धन का उचित हिस्सा दावा करने और प्राप्त करने में सक्षम बनाता है। इन अधिकारों की गारंटी आर्थिक विकास को सामाजिक समानता में बदलने की प्रक्रिया सुनिश्चित करती है।

भारतीय संविधान के राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों के अनुसार, राज्य को अपने नागरिकों, पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए आजीविका के पर्याप्त साधनों का अधिकार, पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए समान काम के लिए समान वेतन सुनिश्चित करना आवश्यक है। श्रमिकों के दुर्व्यवहार और शोषण से सुरक्षा, आर्थिक आवश्यकता, उनके स्वास्थ्य और ताकत की सुरक्षा, बच्चों के लिए स्वस्थ तरीके से और स्वतंत्रता और सम्मान की स्थिति में विकास के अवसर और सुविधाएं सुनिश्चित करना और शोषण से बच्चों और युवाओं की रक्षा करना आदि शामिल है।

राज्य को समान न्याय और मुफ्त कानूनी सहायता सुनिश्चित करने, काम करने के अधिकार, शिक्षा और अवांछनीय अभाव के मामलों में सार्वजनिक सहायता के लिए प्रभावी प्रावधान करने, काम की न्यायसंगत और मानवीय स्थिति और मातृत्व राहत सुनिश्चित करने, काम सुरक्षित करने की भी आवश्यकता है।

थोराट (2008), के अनुसार, पूर्ण नागरिकता या नागरिक अधिकारों (अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, कानून का शासन, न्याय का अधिकार) राजनीतिक अधिकार (राजनीतिक शक्ति के अभ्यास में भागीदारी का अधिकार और साधन), और सामाजिक–आर्थिक अधिकारों से इनकार (संपत्ति, रोज़गार और शिक्षा का अधिकार) दरिद्र जीवन के प्रमुख आयाम हैं।

श्रम मानक

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने अंतर्राष्ट्रीय श्रम मानकों को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। (आईएलएस)। आईएलओ ने विभिन्न सम्मेलनों में अंतरराष्ट्रीय श्रम मानक तैयार किए हैं। 1944 में, फिलाडेल्फिया के सम्मेलन ने फिलाडेल्फिया की घोषणा को अपनाया, जिसने अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के मूलभूत लक्ष्यों और उद्देश्यों को दोहराया। श्रम मानकों का वर्णन करने के लिए कई संक्षिप्त शब्दों का उपयोग किया गया है जैसे कि उचित श्रम मानक, न्यूनतम श्रम मानक, बुनियादी या मुख्य श्रम मानक आदि। श्रम मानकों का पालन न करने के लिए कई कारकों को भी जिम्मेदार ठहराया गया है जैसे अनुचित व्यापार और श्रम अभ्यास, अविकसितता की स्थिति, अनुपस्थिति कार्यस्थल पर सहयोग इत्यादि।

त्रिपक्षीय समितियों के मंच के माध्यम से श्रम की स्थिति में सुधार करने की दृष्टि से, अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने जून 1976 को सम्मेलन पारित किया। इसके अलावा, मार्च 1995 में कोपेनहेगन में आयोजित सामाजिक विकास पर विश्व शिखर सम्मेलन ने ऐसे न्यूनतम स्तर मौलिक न्यूनतम श्रम मानकों पर अंतरराष्ट्रीय सहमति बनाकर सामाजिक सुरक्षा के लिए आधार स्थापित करने का प्रयास किया था।

हालाँकि, महत्वपूर्ण सात सम्मेलन हैं। (सम्मेलन संख्या 29, 87. 98, 100, 105, 111, और 138)। इन सम्मेलनों को सामाजिक खंड, श्रम खंड, सामाजिक सरोकार आदि के रूप में भी जाना जाता है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन सदस्य देशों में अंतरराष्ट्रीय श्रम मानकों को कानून बनाने और निष्पादित करने के लिए नियोक्ताओं, श्रमिकों और राज्य के बीच त्रिपक्षीय व्यवस्था प्रदान करता है।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम मानक विभिन्न क्षेत्रों में श्रमिकों की सुरक्षा करते हैं। उनमें संघ की स्वतंत्रता, समान काम के लिए समान वेतन, सुरक्षित कामकाजी स्थितियां, जबरन श्रम और लिंग आधारित भेदभाव का उन्मूलन, रोजगार सुरक्षा, सामाजिक सुरक्षा का प्रावधान, प्रवासी श्रमिकों की सुरक्षा, महिला श्रमिकों के यौन उत्पीड़न का उन्मूलन और अन्य शामिल हैं। ये अंतर्राष्ट्रीय श्रम मानक तैयार किए गए थे और उनमें से कुछ को श्रमिकों के भौतिक और नैतिक हितों की रक्षा के उद्देश्य से वर्ष 1919 और वर्ष 1978 के बीच अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा संशोधित किया गया था।

भारत में श्रम मानक

श्रम मानकों के संबंध में. भारत अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का संस्थापक सदस्य है। भारत ने 181 सम्मेलनों में से 37 का अनुमोदन किया है। भारत का संविधान सात प्रमुख अंतरराष्ट्रीय श्रम मानकों में परिकल्पित सभी मूलभूत सिद्धांतों को कायम रखता है। सात प्रमुख श्रम सम्मेलनों में से, भारत ने तीन जबरन मजदूरी संख्या 29, समान पारिश्रमिक संख्या 100 और भेदभाव क्रमांक 111 का अनुमोदन किया है।

भारत सरकार ने कुछ सम्मेलनों की पुष्टि की है जैसे काम के घंटे उद्योग सम्मेलन 1919, रात्रि कार्य (महिला) सम्मेलन 1919, न्यूनतम आयु सम्मेलन 1919, संघ का अधिकार (कृषि श्रमिक), श्रमिक मुआवजा, 1925, समान पारिश्रमिक सम्मेलन 1951, हालाँकि, संघ की स्वतंत्रता और सामूहिक सौदेबाजी का अधिकार (सम्मेलन संख्या 87 और 98) दोनों सम्मेलनों को सिविल सेवकों के लिए ट्रेड यूनियन अधिकारों से जुड़ी तकनीकी कठिनाइयों के कारण भारत द्वारा अनुमोदित नहीं किया गया है। भारतीय संविधान में एसोसिएशन की स्वतंत्रता को मौलिक अधिकार के रूप में गारंटी दी गई है, ट्रेड यूनियन अधिनियम 1926 सम्मेलन के कुछ उद्देश्यों को पूरा करता है।

भारतीय संविधान, पुरुषों और महिलाओं के बीच समानता के सिद्धांत को कायम रखता है। मजदूरों के काम के घंटे और न्यूनतम वेतन तय करने और उनके रहने की स्थिति में सुधार करने के लिए कानून बनाए गए हैं। विभिन्न सुरक्षा योजनाएं बनाई गई हैं। इसके अलावा, विभिन्न श्रम कानून हैं, जैसे ट्रेड यूनियन अधिनियम 1926, न्यूनतम वेतन अधिनियम 1948, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948, औद्योगिक विवाद अधिनियम 1949, औद्योगिक विवाद निर्णय अधिनियम 1955, बोनस भुगतान अधिनियम 1955, व्यक्तिगत चोटें, (मुआवजा बीमा) अधिनियम 1963, मातृत्व 5 लाभ अधिनियम 1967, अनुबंध श्रम (विनियमन और उन्मूलन) अधिनियम 1970, बंधुआ श्रम प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम 1976, समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, अंतरराज्यीय प्रवासी कामगार (रोजगार का विनियमन) सेवा की शर्तें अधिनियम 1979, बाल श्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम 1986 आदि।

हालाँकि, ये श्रम कानून और नीतियां केवल संगठित क्षेत्र के श्रमिकों के लिए लागू हैं। भारत में अनुमानित 8 प्रतिशत श्रम शक्ति औपचारिक या संगठित क्षेत्र में आती है, जो औद्योगिक विवादों, अनुचित बर्खास्तगी ट्रेड यूनियन अधिकारों, वेतन और काम करने की स्थिति, स्वास्थ्य, बीमा, सुरक्षा योजनाओं आदि को कवर करने वाले संकुचित श्रम कानूनों द्वारा संरक्षित है।

भारत में श्रमिकों का प्रवासन

कृषि आधारित उद्योगों में मौसमीकरण की समस्या बड़ी संख्या देशों में पाई जाती है। मौसमी कारखाने वह है जो सामान्यतः वर्ष के आधे से अधिक दिनों तक काम करते है। लगभग सभी मौसमी कारखानों की मुख्य विशेषता यह है कि श्रमिक अभी भी कृषक हैं और अधिकांश लोग अपने गाँव के घरों में रहते हैं। श्रमिक आम तौर पर काफी असंगठित होते हैं और मजदूरी कम होती है।

भारत की जनसंख्या का मुख्य स्रोत कृषि है। हमारे देश की अधिकांश ग्रामीण आबादी को आजीविका के मुख्य स्रोत के लिए जिस कृषि पर निर्भर रहना पड़ता है। जो स्वयं काफी हद तक वर्षा और वर्षा के वितरण पर निर्भर है; वर्षा की विफलता और इसके परिणामस्वरूप कृषि की विफलता से आबादी के इस बड़े हिस्से की क्रय शक्ति बहुत कम हो जाती है, ऐसी स्थिति की पुनरावृत्ति को सूखा कहा जाता है। भारत के कुछ हिस्सों में हर पांच साल में एक बार सूखा पड़ता है

गरीबी की समस्या का सीधा संबंध बेरोजगारी, अल्परोजगार और कम उत्पादकता से है। सिंचाई सुविधाओं के अभाव के कारण बहुफसली फसलें उगाई जा सकती हैं, मानसूनी कृषि अधिकांश ग्रामीण श्रम शक्ति को मौसमी बेरोजगारी (मायराडाल, 1970) की विस्तारित अवधि के लिए बाध्य करती है। ये निराश्रित बेरोजगार श्रमिक अपने गाँव के घरों को छोड़ देते हैं और पहले से ही खेती में शामिल हो जाते हैं। न केवल भारत में बल्कि विकासशील और विकसित देशों के अन्य हिस्सों में भी अधिक आबादी वाले क्षेत्र हैं, जिनके कृषि श्रमिक औद्योगिक क्षेत्र में स्थानांतरित हो रहे हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. Das Gupta, J.B., (1979), Migration from Rural Areas, Publication OUP, Delhi.
2. GOI, (1931), Report of the Royal Commission on Labour in India, Central publication branch, Calcutta,
3. Naoroji, Dadabhai, (1888), Poverty in India, Winckworth Faulenger and co. the Aldine press, London.
4. Powar.R.S. (1983), the role of agricultural in developing countries, Rural India, Vol.46, No.12, December.
5. Singh, Charan (1965), India's poverty and its solution, Asia publishing, House. Bombay.

❖◆❖